अध्याय 11

मनोदैहिक विकृतियाँ
(PSYCHOSOMATIC DISORDERS)

मनोदैहिक विकृति का अर्थ एवं स्वरूप
(Meaning and Nature of Psychosomatic Disorder)

मनोदैहिक विकृति (psychosomatic disorder or psychopysiologic disorder) एक ऐसी विकृति है जिसमें मनश्चिकित्सकों (psychiatrists) तथा नैदानिक मनोवैज्ञानिकों (clinical psychologists) ने 1930 के लगभग से अभिरुचि (interest) दिखलाना प्रारंभ किया है। यद्यपि यह सही है कि DSM-IV में मनोदैहिक विकृति को अलग से एक मानसिक रोग नहीं माना गया है और यही कारण है कि इसे इसमें सम्मिलित भी नहीं किया गया है । फिर भी चूँकि असामान्य व्यवहार से इसका ऐतिहासिक संबंध होने के कारण यहाँ वर्णन किया जा रहा है। इस तरह की विकृति (disorder) में रोगी अपने सांवेगिक संघर्षों (emotional conflict) एवं चिंताओं (anxieties) की अभिव्यक्ति वास्तविक शारीरिक लक्षणों (actual bodily symptoms) के रूप में करता है। इस तरह से इस रोग में रोगी में कुछ वास्तविक शारीरिक विमारियाँ होतीं हैं परंतु उनका कारण मनोवैज्ञानिक (psychological) होता है न कि दैहिक (physiological)। दूसरे शब्दों में, मनोदैहिक विकृति वैसी विकृति को कहा जाता है जिसमें रोग के लक्षण की अभिव्यक्ति (expression) शारीरिक होती है परंतु उनका कारण शारीरिक न होकर मनोवैज्ञानिक (psychological) होता है। अत: इस रोग का कारण सांवेगिक संघर्ष तथा चिंता आदि होता है। शायद यही कारण है कि इस रोग का नाम **मनोदैहिक विकृति** (psychosomatic disorder) रखा गया है। इस रोग की विशेषता यह भी बतलायी गयी है कि इसमें उन्हीं अंगों (organs) द्वारा रोग के लक्षण अभिव्यक्ति होती है जो स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (autonomic nervous system) के नियंत्रण में होते हैं। स्वायत्त तंत्रिका तंत्र के नियंत्रण में रहने वाले कुछ प्रमुख अंगों के नाम हैं–हृदय (heart), गुर्दा (kidney), आँत (intestine), चर्म क्रियाएँ (skin activities) आदि। अत: स्पष्ट है कि इस रोग में इन्हीं शारीरिक अंगों में विकृतियाँ (disorders) उत्पन्न होकर सांवेगिक संघर्षों (emotional conflicts) की अभिव्यक्ति होती है। किश्कर[1] (Kisker, 1964) ने मनोदैहिक विकृति (psychosomatic disorder) को इस प्रकार परिभाषित किया है, "जब भीतरी सांवेगिक कठिनाइयों की अभिव्यक्ति उन शारीरिक तंत्रों

---

1. "When the underlying emotional difficulties are expressed through body systems innervated by the autonomic nervous system, the resulting condition is called a psychophysiologic disorder."
Kisker : *Disorganized personality,* 1964, p. 298.

द्वारा की जाती है जो स्वायत्त तंत्रिका तंत्र द्वारा नियंत्रित या तंत्रिकोत्तेजित होती है तो इस अवस्था को मनोदैहिक विकृति (pychophysiologic disorder) कहा जाता है।'' **सारासन**[1] (Sarason, 1972) ने भी मनोदैहिक विकृति (psychophysiological disorder) को कुछ ऐसे ही परिभाषित करते हुए कहा है, ''मनोदैहिक या मनोशारीरिक प्रतिक्रिया स्नायुविकृत अवस्था के समान अवस्था को कहा जाता है जिसमें किसी एक लक्ष्य अंग या अंग तंत्र में शारीरिक क्षति होती है।''

इन परिभाषाओं का विश्लेषण (analysis) करने पर हमें मनोदैहिक विकृतियों के स्वरूप (nature) के बारे में निम्नांकित तथ्य प्राप्त होते हैं–

(i) मनोदैहिक विकृति में शारीरिक रोग के स्पष्ट लक्षण होते हैं।

(ii) इस तरह की विकृति में रोग शारीरिक अवश्य होता है, परंतु उसका कारण मनोवैज्ञानिक (psychological) होता है। दूसरे शब्दों में, इस रोग का कारण सांवेगिक संघर्ष (emotional conflict), चिन्ता, मानसिक तनाव आदि होते हैं जो मन:स्नायुविकृति (psychoneurosis) की अवस्था में पाये जाते हैं। अंतर इतना ही होता है कि मनोदैहिक विकृति में ये मनोवैज्ञानिक कारक अधिक गंभीर एवं चिरकालिक (chronic) स्वरूप के होते हैं जबकि मन:स्नायुविकृति (psychoneurosis) में ये कारक इतना गंभीर एवं चिरकालिक प्रकृति के नहीं होते हैं।

(iii) मनोदैहिक विकृति में शरीर के वे ही अंग रोग का शिकार होते हैं जो स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (autonomic nervous system) के नियंत्रण में होते हैं अर्थात् केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (central nervous system) के अधीन रहने वाले अंग इस रोग से प्रभावित नहीं होते हैं।

(iv) मनोदैहिक विकृति में कभी-कभी तो मनोवैज्ञानिक कारकों का शारीरिक रोग के लक्षण से संबंध बिल्कुल ही स्पष्ट होता है परंतु कभी-कभी इन दोनों का संबंध उतना स्पष्ट नहीं होता है। अत: उसके बारे में विशेष प्रयास करके एक अनुमान लगाना होता है।

(v) मनोदैहिक विकृति (psychosomatic disorder) में रोगी अपनी सांवेगिक स्थिति (emotional state) के बारे में चेतन रूप से (consciously) प्राय: अवगत नहीं रहता है।

इन विशेषताओं से स्पष्ट है कि मनोदैहिक विकृति एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें मनोवैज्ञानिक कारकों एवं दैहिक लक्षणों का अनोखा संगम होता है।

मनोदैहिक विकृतियों के सामान्य कारण
(General Etiology of Psychophysiological Disorders)

अन्य रोगों के समान ही मनचिकित्सकों (psychiatrists) ने मनोदैहिक विकृतियों (psychophysiological disorders) के तीन सामान्य कारण (general etiology) बतलाये हैं जो निम्नांकित हैं—

(क) जैविक कारक (Biological factors)

(ख) मनोसामाजिक कारक (Psychosogical factors)

(ग) सामाजिक-सांस्कृतिक कारक (Socio-cultural factors)

इन तीनों तरह के कारकों की व्याख्या निम्नांकित है–

(क) जैविक कारक *(Biological factors)*–मनोदैहिक विकृतियों की व्याख्या जैविक कारकों (biological factors) के रूप में की गयी है क्योंकि कुछ मनश्चिकित्सकों (psychiatrists) का मानना है कि इन विकृतियों की उत्पत्ति में जैविक तत्त्वों (biological facts) की काफी भूमिका पायी जाती है। प्रमुख जैविक कारक निम्नांकित हैं–

(i) जननिक कारक *(Genetic factors)*–मनोदैहिक विकृतियों (psychosomatic disorders) में जननिक कारक का महत्त्व काफी बतलाया गया है। ग्रिगोरी तथा रोजन (Gregory Rozen, 1965) ने अपने अध्ययनों में पाया कि अल्सर या शोथ रोगियों (ulcer patients) के भाइयों में इस रोग की होने की संभावना अन्य व्यक्तियों में इस रोग के होने की संभावना दुगुनी से अधिक होती है। उसी तरह से श्वसनी दमा (bronchial asthma), उच्च रक्त-चाप (hypertension), अर्द्ध सिरदर्द या अधसीसी (migraine) भी उन्हीं व्यक्तियों में अधिक पाया जाता है जिनके संबंधियों में इस रोग का प्रकोप हो चुका होता है। इन अध्ययनों से यह पता चल जाता है कि मनोदैहिक विकृति (psychosomatic disorder) का कारण जननिक कारक (genetic factor) है हालांकि कुछ अन्य अध्ययनों में इस दावा (claim) का खंडन करते हुए यह कहा गया है कि इसमें सीखने (learning) तथा अनुभव (experience) की भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता है। परिवार में किसी को भी यदि किसी प्रकार का मनोदैहिक विकृति या रोग उत्पन्न हो जाता है, तो अन्य सदस्य को उनके व्यवहारों को प्रेक्षण (observation) करके उसे सीखने का मौका और फिर वैसे ही लक्षण विकसित करने की प्रेरणा भी मिलती है। इस आलोक में यह कहना कि चूँकि परिवार के किसी एक सदस्य में रोग उत्पन्न होने पर अन्य सदस्यों में रोग उत्पन्न होने का कारण जननिक (genetic) होता है, बहुत उचित नहीं दिख पड़ता । इसमें अनुभव (experience) तथा सीखने (learning) जैसे कारकों की भूमिका भी होती है। इस तथ्य का समर्थन लिलजेर्फोस तथा राहे (Liljefors & Rahe, 1970) के अध्ययन से भी मिलता है। उन्होंने 32 एकांडी जुड़वाँ भाइयों (identical twin brothers) का अध्ययन किया जिसके प्रत्येक युग्म के एक सदस्य में हृदय रक्तधमनी की विकृति (coronory disease) थी तथा दूसरा इस दृष्टिकोण से सामान्य था। जिस सदस्य में विकृति थी, वह अधिक कार्योन्मुखी (work-oriented), आराम कम करने की प्रवृत्ति वाला तथा घरेलू समस्याओं (home problems) से घिरे रहने वाले स्वभाव का आदमी था। इससे

स्पष्ट हो जाता है कि मनोदैहिक विकृति में जिन्दगी की तनावपूर्ण परिस्थिति (life stress) की भूमिका भी अधिक होती है।

(ii) स्वायत्त क्रियाओं में अन्तर एवं शारीरिक दुर्बलता *(Differences in autonomic functions and somatic weaknesses)*–ओल्फ (Wolff, 1950) तथा रॉबिन्सन (Robinson, 1985) के अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि अरुचिकर उद्दीपकों (aversive stimuli) या अरुचिकर परिस्थितियों (aversive situations) के प्रति बालक या वयस्क समान रूप से दैहिक प्रतिक्रिया (somatic reactions) नहीं करते हैं। कुछ लोग ऐसे उद्दीपकों के प्रति उच्च रक्त दवाब (hypertension) के रूप में तो कुछ अधसीसी (migraine) के रूप में तो कुछ श्वसनी दमा (bronchial asthma) के रूप में लक्षण विकसित कर प्रतिक्रिया (reaction) करते हैं। फ्रीडमैन तथा इवाई (Friedman & Iwai, 1976) ने अपने अध्ययन में पाया कि जिन लोगों में तनावपूर्ण परिस्थिति में हृदय की धड़कन बढ़ जाती है, उनमें मनोदैहिक हृदय वाहिका विकृतियाँ (psychophysiologic cardiovascular diseases) होने की संभावना अधिक होती है तथा जिन लोगों में ऐसी परिस्थिति से घिर जाने पर अमाशय में स्राव (secretions) अधिक होने लगता है, उसमें आमाशय का घाव (peptic ulcer) तथा अन्य आमाशयतांत्र विकृतियाँ (gastrointestional disorders) विकसित होने की संभावना अधिक होती है।

कुछ ऐसे सबूत भी मिले हैं जिसमें यह देखा गया है कि आनुवांशिकता (heredity), बीमारी (illness) या अन्य किसी दूसरे प्रकार के आघात (trauma) के कारण शरीर का कोई अंग काफी दुर्बल (weak) हो जाता है और व्यक्ति जब भी किसी संघर्षमय परिस्थिति (conflicting situation) में होता है या सांवेगिक तनाव की परिस्थिति में होता है, तो उसके उस अंग की क्रिया प्रभावित हो जाती है और संबंधित लक्षण विकसित हो जाते हैं। इसे **कायिक-कमजोरी सिद्धान्त** (somatic-weakness theory) कहा गया है। जैसे, किसी व्यक्ति का फेफड़ा जन्मजाती कुछ कारणों से या किसी बीमारी से या किसी प्रकार के आघात लगने से प्रभावित होकर कमजोर हो जाता है तो सांवेगिक तनाव की परिस्थिति में अत्यधिक उम्मीद यह होती है कि उसमें श्वसन संबंधी मनोदैहिक विकृतियों जैसे श्वसन दमा (bronchial asthma), अतिश्वसन संलक्षण (hyperventilation syndrome) आदि विकसित हो जाएगा। उसी तरह से जिन व्यक्तियों का किसी कारण से दुर्बल आमाशय (weak stomach) हो जाता है, तो सांवेगिक संघर्ष (emotional conflict) की परिस्थिति में उनमें आमाशयतांत्र की विकृतियों (gastrointestinal disorders) के रूप में लक्षण प्रस्फुटित होने की संभावना अधिक रहती है।

(iii) मस्तिष्कीय-अन्तरावयवी नियंत्रण प्रक्रिया का भंग होना *(Disruption of corticovisceral control mechanism)*–मनोदैहिक विकृतियों की जैविक व्याख्या (biological explanation) मस्तिष्कीय-अन्तरावयवी नियंत्रण प्रक्रिया (corticovisceral control mechanism) के रूप में भी किया गया है। इस प्रक्रिया द्वारा स्वायत्त क्रियाओं (autonomic functioning) का नियंत्रण होता है। जब मस्तिष्कीय अन्तरावयवी नियंत्रण प्रक्रिया कार्य करना बंद कर देती है, तो व्यक्ति का समस्थिति (homeostasis) से संबंधित कार्य ठीक ढंग से

सम्पन्न नहीं हो पाता है अर्थात् इसकी स्थिति में गड़बड़ी उत्पन्न हो जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि व्यक्ति की सांवेगिक अनुक्रियाओं की तीव्रता में काफी वृद्धि हो जाती है और एक सामान्य समय सीमा (normal time limits) के भीतर व्यक्ति पुनः समस्थिति (homeostasis) या आंतरिक शारीरिक संतुलन (internal physiological balance) बनाने में असमर्थ रहता है। सतत तनाव (continued stress) की अवस्था में ऐसे लोगों में तब मनोदैहिक विकृति (psychophysiological disorder) उत्पन्न होने की संभावना तीव्र हो जाती है।

(ख) मनोसामाजिक कारक *(Psychosocial factors)*–मनोदैहिक विकृतियों की उत्पत्ति में मनोसामाजिक कारकों अर्थात् कुछ मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक कारकों की भूमिका का भी अध्ययन किया गया है हालांकि इन कारकों का संबंध इन विकृतियों से स्पष्ट रूप से अभी तक नहीं जोड़ा जा सका है। ऐसे मनो-सामाजिक कारकों में से कुछ प्रमुख कारक निम्नांकित हैं–

(i) व्यक्तित्व शीलगुण एवं अपर्याप्त समायोजन प्रारूप *(Personality characteristics and inadequate adjustment patterns)*–कुछ ऐसे अध्ययन किये गए हैं जिनसे स्पष्ट हो गया है कि जब व्यक्ति में एक खास तरह के शीलगुणों (trait) की अधिकता होती है, तो उसमें एक विशेष प्रकार के मनोदैहिक विकृति के होने की संभावना अधिक होती है, परन्तु कुछ अन्य दूसरे तरह के शीलगुणों की अधिकता होने पर उसमें कुछ दूसरे प्रकार के मनोदैहिक विकृति के होने की संभावना अधिक हो जाती है। जैसे, डनबार (Dunbar, 1943, 1954) ने अपने अध्ययन के आधार पर बतलाया है कि जिन लोगों में दृढ़ता (rigidity), किसी उद्दीपक के प्रति अतिसंवेदनशीलता, चिरकालिक विद्वेषता (chronic hostility) जैसे शीलगुणों की प्रधानता होती है उसमें उच्च रक्तचाप (hypertension) के होने की संभावना अधिक होती है। अन्य अध्ययनों में भी इस तरह के तथ्यों को समर्थन मिला है। जैसे, किडसन (Kidson, 1973) ने अपने अध्ययन में पाया कि जिन व्यक्तियों में असुरक्षा, चिन्ता, संवेदनशीलता आदि जैसे शीलगुणों की प्रधानता होती है, उनमें उच्च रक्तताप जैसे मनोदैहिक विकृति विकसित होने की संभावना अधिक होती है। कुछ लोगों जैसे रॉविन्सन तथा उनके सहयोगियों (Robinson et al, 1972) ने उपर्युक्त तथ्य का खंडन किया है और कहा है कि व्यक्तित्व शीलगुणों को मनोदैहिक विकृति (psychophysiological disorder) का कारण नहीं बल्कि उपज (product) मानना चाहिए।

कुछ अध्ययनों में तनावपूर्ण परिस्थिति में व्यक्ति की मनोवृत्ति (attitude) तथा समायोजन क्षमता (coping capacity) के संबंधों पर प्रकाश डाला गया है और यह बतलाया गया है कि कुछ खास-खास मनोदैहिक विकृति में एक विशेष तरह की समायोजन क्षमता (coping capacity) पायी जाती है। जैसे, शोथ (ulcers) के रोगियों में आम तौर पर यह देखा गया है कि उनमें यह भावना व्याप्त होती है कि जो उसे मिलना चाहिए था, जिन्दगी में वह नहीं मिल पाया है और इसलिए उसे प्राप्त करने का भरसक प्रयास करना चाहिए। उसी तरह उच्च रक्तचाप (hypertension) के रोगियों का समायोजन पैटर्न (adjustment pattern) कुछ ऐसा होता है जिसमें वह अपने आप को विभिन्न परिस्थितियों से हमेशा सतर्क रखता है, वह अपने आप को खतरा से घिरा पाता है, इसलिए उससे दूर रहने के लिए वह भरसक चौकन्ना रहता है। कहने का तात्पर्य यह है कि एक खास ढंग की समायोजनशीलता का पैटर्न या प्रारूप होने पर व्यक्ति

में उससे संबंधित मनोदैहिक विकृति (psychosomatic disorder) विकसित होता है। इस तथ्य की पुष्टि ग्राहम (Graham, 1962) ने अपने अध्ययनों के आधार पर किया है।

(ii) अन्तर्वैयक्तिक संबंध *(Interpersonal relationship)*–कई अध्ययनों से यह पता चला है कि कुछ कारणों जैसे वैवाहिक दुःख, विवाह-विच्छेद या तलाक (divorce) तथा दोषपूर्ण पारिवारिक प्रारूप (pathogenic family patterns) से जब व्यक्ति का अंतर्वैयक्तिक संबंध (interpersonal relationship) दोषपूर्ण हो जाता है, तो इसका प्रभाव उसके समायोजनशीलता पर बुरा पड़ता है और वह किसी सांवेगिक परिस्थिति या तनावपूर्ण परिस्थिति के होने पर प्रायः मनोदैहिक लक्षणों (psychosomatic symptoms) द्वारा अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। ब्लूम, अशर एवं ह्वाईट (Bloom, Asher & White, 1978) ने अपने अध्ययनों में उपर्युक्त तथ्य की पुष्टि करते हुए कहा है कि वैसे व्यक्तियों जिन्हें तलाक का सामना करना पड़ा या जिनका वैवाहिक जीवन दुःखी था उनकी मृत्यु दर (death rate) विभिन्न तरह के मनोदैहिक विकृतियों के कारण उन व्यक्तियों की तुलना में अधिक था जिनमें ऐसी कोई समस्या नहीं थी। स्ट्रोएब तथा स्ट्रोएब (Stroebe & Stroebe, 1983) ने अपने अध्ययन के आधार पर यह बतलाया है कि पति या पत्नी की मृत्यु हो जाने पर जिन्दा रहने वाले व्यक्ति में तरह-तरह की चिंताएँ उत्पन्न हो जातीं हैं और उनमें मनोदैहिक विकृतियाँ (psychosomatic disorder) उत्पन्न हो जातीं हैं और उनका जीवित रहना संभव नहीं हो पाता है। इन दोनों मनोवैज्ञानिकों ने अपने अध्ययन में पाया कि पुरुषों में अपनी पत्नी की मृत्यु का गम महिलाओं में अपने पति की मृत्यु के गम की तुलना में अधिक गंभीर होता है। अतः उनमें मनोदैहिक विकृतियाँ (psychosomatic disorders) उत्पन्न होने की संभावना अधिक होती है। शायद यही कारण है कि ऐसे पुरुषों में मृत्यु दर अधिक होती है। लिंक (Lynch, 1977) के अनुसार जिन व्यक्तियों में मानवीय संबंधों की कमी होती है तथा जो अकेले रहने के लिए बाध्य रहते हैं, उनमें मनोदैहिक हृदयवाहिका विकृतियाँ (cardiovascular disorders) विकसित होने की संभावना अधिक होती है। लिपटन एवं उनके सहयोगियों (Lipton et al, 1966) तथा ओल्डस् (Olds, 1970) ने अपने-अपने अध्ययनों में पाया कि श्वसनी दमा (bronchial asthma) के रोगियों की अधिकतर माताएँ अपने बच्चों के प्रति द्वैधवृत्ति (ambivalent) संबंध रखने वाली थी अर्थात् वे अपने बच्चों को कभी तो काफी डाँट फटकार करती थी तो कभी उसे जरूरत से ज्यादा दुलार-प्यार करती थीं। ऐसे परिवार के बच्चों में असुरक्षा (insecurity) तथा अतिनिर्भरता (overdependent) के शीलगुण अधिक थे, अतः वे किसी सांवेगिक तनाव की परिस्थिति में मनोदैहिक विकृतियों (psychophysiologic disorder) के लक्षण विकसित कर लेते थे।

(iii) तनाव का स्वरूप एवं प्रकार *(Nature and type of stress)*–एलेक्जेण्डर (Alexander, 1950) ने अपने अध्ययन के आधार पर यह बतलाया है कि एक खास तरह के सांवेगिक तनाव (emotional stress) उत्पन्न होने पर एक विशेष प्रकार की मनोदैहिक विकृति (psychosomatic disorder) उत्पन्न होती हैं। जैसे, जिन व्यक्तियों को स्नेह, प्यार, अनुराग एवं दूसरों से सुरक्षा (protection) नहीं मिल पाता है, वे सांवेगिक रूप से अस्थिर हो जाते हैं तथा उनमें चिंता एवं क्रोध (anger) जैसे संवेग की अधिकता होने से आमाशय अम्ल

(stomach acid) जरूरत से ज्यादा निकलने लगता है और व्यक्ति में आँत का शोथ (peptic ulcer) विकसित हो जाता है। एलेक्जेण्डर (Alexander, 1950) के अनुसार दबा हुआ विद्वेषी आवेग से ऐसी सांवेगिक अवस्था उत्पन्न होती है जो आवश्यक हाइपरटेंशन (essential hypertension) को जन्म देता है। इसे अनाभिव्यक्त-क्रोध या **भीतरी-क्रोध सिद्धांत** *(anger-in-theory)* कहा जाता है जिसका प्रतिपादन उन्होंने अपने उन रोगियों के प्रेक्षण के आधार पर किया जो उनके पास मनोविश्लेषण के लिए आये हुए थे। हालांकि कुछ आधुनिक अध्ययनों से इस तथ्य को समर्थन नहीं मिला है, फिर भी लोग यह मानते हैं कि कई तरह के तनावपूर्ण परिस्थितियों के उत्पन्न होने पर व्यक्ति में मनोदैहिक विकृतियाँ (psychophysiologic disorder) विकसित हो जातीं हैं।

(iv) स्वायत्त तंत्रिका तंत्र के कार्यों को सीखना *(Learning of the functions of autonomic nervous system)*–कुछ लोगों का मत है कि पुनर्बलन (reinforcement) तथा आकस्मिक अनुबंधन (accidental conditioning) के आधार पर व्यक्ति वैसे कार्यों को करना सीख लेता है जो सामान्यत: स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (autonomic nervous system) के अधीन होते हैं और इस तरह से उनमें मनौहिक विकृतियाँ (psychosomatic disorders) उत्पन्न हो जातीं हैं। जैसे, जिन बच्चों का पेट खराब हो जाने पर उन्हें स्कूल जाने से प्राय: रोका जाता है, वे किसी भी सांवेगिक परिस्थिति के आने पर अन्तरायवी अनुक्रियाओं (visceral response) में गड़बड़ी करने की आदत सीख लेते हैं और आगे चलकर उनमें आमाशयांत्र विकृतियाँ (gastrointestinal disorders) उत्पन्न होने की संभावना बढ़ जाती है।

इस तरह से हम देखते हैं कि मनोदैहिक विकृतियों के कई मनोसामाजिक कारण हैं जिनमें व्यक्तित्व शीलगुण, अपर्याप्त समायोजन प्रारूप तथा अंतर्वैयक्तिक संबंधों (interpersonal relationship) को तुलनात्मक रूप से अधिक महत्त्वपूर्ण बतलाया गया है।

(ग) सामाजिक-सांस्कृतिक कारक *(Socio-cultural factors)*–कुछ ऐसे सबूत मिले हैं जिनके आधार पर यह कहा जाता है कि मनोदैहिक विकृतियों की उत्पत्ति में सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों (socio-cultural factors) की भी भूमिका होती है। जैसे, उस समाज में जिनकी संस्कृति आधुनिकीकरण (modernization) के पूर्ण चपेट में होती है, श्वसनी दमा (bronchial asthma), सिरदर्द (headaches), शोथ (ulcers) तथा उच्च रक्त चाप (hypertension) जैसे मनोदैहिक विकृतियाँ (psychosomatic disorders) अधिक विकसित होती हैं जबकि वैसे समाज में जिनमें आधुनिक संस्कृति का प्रभाव नहीं पड़ा है, ऐसी विकृतियाँ नहीं पायी जाती हैं। परन्तु जैसे-जैसे वे आधुनिक संस्कृति के चपेट में आते जाते हैं, वैसे-वैसे उनमें इन विकृतियों (disorders) तथा साथ-ही-साथ आमाशायांत्र विकृति (gastrointestinal disorders) के उत्पन्न होने की संभावना बढ़ जाती है। कुछ लोगों जैसे पासामानिक (Pasamanick, 1962), रेनी एवं स्रौल (Rennie & Srole, 1956) ने अपने-अपने अध्ययनों से यह बतलाया है कि उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर (high socio-economic status) के लोगों में शोथ (ulcers) एवं हृदय रोग अधिक होते हैं जबकि निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के लोगों में श्वसनी दमा (bronchial asthma) तथा संधिशोथ (arthritis) जैसी मनोदैहिक विकृतियाँ (psychophysiological disorders) अधिक होतीं हैं हालांकि कुछ अन्य लोगों ने मनोदैहिक

विकृतियों एवं सामाजिक-आर्थिक स्तर (socio-economic status) में इस ढंग का कोई स्पष्ट संबंध होने से इनकार किया है।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि मनोदैहिक विकृतियों (psychosomatic disorders) के कई कारण हैं। अगर सचमुच में किसी भी मनोदैहिक विकृति की उत्पत्ति को स्पष्ट रूप से समझना है, तो जैविक, मनोसामाजिक एवं सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों (socio-cultural factors) पर संयुक्त रूप से ध्यान देना अनिवार्य है।